

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 10 अध्याय 73 — मुक्त राजाओं को आशीर्वाद

5 October 2026



दीर्घ बन्दीवास से क्षीण और मलिन बीस हजार आठ सौ राजा जरासन्ध के पर्वत-कारागार से बाहर निकलते हैं और द्वार पर स्वयं भगवान को प्रतीक्षा करते पाते हैं; उनके एक दर्शन से सारे पाप धुल जाते हैं और वे उनके चरणों में गिर पड़ते हैं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में पुनः स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं और शिक्षाओं की हमारी भक्तिमयी यात्रा। दशम स्कन्ध के इस तिहत्तरवें अध्याय में जरासन्ध के बन्दी राजा प्रकाश में बाहर आते हैं, श्रीकृष्ण का दर्शन करते हैं और ऐसी प्रार्थना करते हैं जो उनके चरणों की स्मृति के सिवा कुछ नहीं माँगती; प्रभु उन्हें कोमल उपदेश देते हैं कि एक शासक हृदय को उनमें लगाए रखकर संसार में कैसे जिए, उन्हें पुनः राजोचित सम्मान देते हैं, और फिर भीम और अर्जुन के साथ इन्द्रप्रस्थ लौटते हैं, जहाँ युधिष्ठिर आनन्द से रो पड़ते हैं।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 10 (दशम स्कन्ध, उत्तरार्ध)

- अध्याय: 73 (त्रिसप्ततितम अध्याय)
- अध्याय शीर्षक: भगवान श्रीकृष्ण का मुक्त राजाओं को आशीर्वाद
- मुख्य वक्ता: श्री शुकदेव गोस्वामी (राजा परीक्षित को सुनाते हुए); कथा के भीतर मुक्त राजा और भगवान श्रीकृष्ण
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित
- मुख्य स्थल: मगध की पर्वत-वेष्टित राजधानी गिरिव्रज; फिर पाण्डवों की नगरी इन्द्रप्रस्थ
- केंद्रीय विषय: बन्दी राजाओं की मुक्ति; उनकी शरणागति की प्रार्थना; भक्ति, वैराग्य और धर्मपूर्वक शासन पर श्रीकृष्ण का उपदेश; उनका सम्मान और स्वदेश-गमन; तथा प्रभु का युधिष्ठिर के पास लौटना
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 10, अध्याय 73, श्लोक 1-35
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, दशम स्कन्ध, उत्तरार्ध)

पूर्व अध्याय का संदर्भ

बहत्तरवें अध्याय में युधिष्ठिर ने राजसूय यज्ञ का संकल्प किया, और श्रीकृष्ण, भीम तथा अर्जुन ब्राह्मण-वेश में जरासन्ध से द्वन्द्व माँगने गिरिव्रज गए। सत्ताईस दिन के गदा-युद्ध के बाद भीम ने, श्रीकृष्ण के तिनका चीरने के मौन संकेत से, मगधराज को दो टुकड़ों में चीर डाला। फिर श्रीकृष्ण ने जरासन्ध के पुत्र सहदेव को सिंहासन पर बैठाया और जरासन्ध के बन्दी बनाए सब राजाओं को मुक्त कर दिया।

राजा पर्वत-कारागार से बाहर आते हैं

शुकदेवजी ने परीक्षित से कहा कि जरासन्ध ने बीस हज़ार आठ सौ राजकुमारों को युद्ध में सहज ही जीतकर चारों ओर पहाड़ों से घिरी एक घाटी में बन्द कर रखा था। अब भगवान श्रीकृष्ण के छुड़ाए हुए वे उस बन्दीगृह से बाहर निकले — शरीर अनधुले, वस्त्र मैले, भूख से काया सूखी, मुख पिचके हुए, और लम्बे कारावास से सारी शक्ति निचुड़ी हुई।

और उनकी आँखों के सामने पहला दृश्य था स्वयं प्रभु, उनके समक्ष खड़े। उनका वर्ण मेघ-सा श्याम था; वे पीताम्बर पहने थे और चतुर्भुज थे — एक हाथ में कमल और शेष में गदा, शंख और चक्र। वक्ष पर श्रीवत्स का चिह्न दमक रहा था, नेत्र कमल के भीतरी भाग-से अरुण थे, मुख सुन्दर और प्रसन्न था, और कानों में मकराकृति कुण्डल चमक रहे थे। वे किरीट, हार, कंकण, कटिसूत्र और बाजूबन्द पहने थे; गले में कौस्तुभ मणि झिलमिला रही थी और वक्ष पर वनमाला झूल रही थी।

राजा मन्त्रमुग्ध खड़े रह गए। मानो वे उन्हें आँखों से पी रहे हों, जीभ से उनका स्वाद ले रहे हों, नासिका से उनकी सुगन्ध भर रहे हों, भुजाओं से उन्हें आलिंगन कर रहे हों। उनके दर्शन-मात्र से सारे पाप धुल गए, और उन्होंने अपने मस्तक प्रभु के मंगलमय चरणों पर रखकर प्रणाम किया। श्रीकृष्ण के दर्शन के आनन्द ने बन्दीवास की सारी थकान मिटा दी, और हाथ जोड़े हुए वे इन्द्रियों के स्वामी हृषीकेश की स्तुति करने लगे।

मुक्त राजाओं की प्रार्थना

उनकी स्तुति शरणागति और रक्षा की याचना से आरम्भ हुई।

नमस्ते देवदेवेश प्रपन्नार्तिहराव्यय ।

प्रपन्नान् पाहि नः कृष्ण निर्विण्णान्घोरसंसृतेः ॥ ८ ॥

namas te deva-deveśa prapannārti-harāvyaya prapannān pāhi naḥ kṛṣṇa nirviṇṇān ghora-samsṛteḥ

अर्थ: हे देवों के देवों के भी ईश्वर, हे शरणागतों की पीड़ा हरने वाले अविनाशी प्रभु, आपको नमस्कार। हे कृष्ण, इस भयानक जन्म-मृत्यु के चक्र से उकताए हुए हम आपकी शरण में आए हैं — हम शरणागतों की रक्षा कीजिए। (स्कन्ध 10, अध्याय 73, श्लोक 8)

फिर एक ऐसी स्वीकारोक्ति आई जो जितनी विनम्र थी उतनी ही विस्मयकारी। ‘हे मधुसूदन,’ वे बोले, ‘इस मगधराज से हमें कोई द्वेष नहीं। हम राजाओं का राज्य से च्युत होना वास्तव में आपका ही अनुग्रह था।’ उन्होंने समझाया कि राज्य और ऐश्वर्य के मद से फूला राजा कभी सच्चा कल्याण नहीं पाता; प्रभु की माया से मोहित होकर वह क्षणभंगुर सम्पदा को स्थायी मान बैठता है — जैसे अज्ञानी मृगतृष्णा को जलाशय समझ लेते हैं, वैसे ही इन्द्रियों में बँधे अविवेकी निरन्तर बदलती माया को सत्य मान लेते हैं।

उन्होंने स्वयं को भी नहीं बख्शा। पहले सम्पत्ति के नशे में अन्धे होकर वे पृथ्वी-विजय के लिए एक-दूसरे से होड़ करते थे, विजय की धुन में निर्दयतापूर्वक अपनी ही प्रजा का संहार करते थे, और उन्मत्तता में उन प्रभु की ओर ध्यान तक न देते थे जो मृत्यु-रूप में सदा उनके सामने खड़े थे। अब वही अहंकार चूर-चूर हो गया था।

त एव कृष्णाद्य गभीररंहसा

दुरन्तवीर्येण विचालिताः श्रियः ।

कालेन तन्वा भवतोऽनुकम्पया

विनष्टदर्पाश्चरणौ स्मराम ते ॥ १३ ॥

ta eva kṛṣṇādyā gabhīra-rāṁhasā duranta-vīryeṇa vicālītāḥ śriyaḥ kālena tanvā bhavato 'nukampayā vinaṣṭa-darpāś caraṇau smarāma te

अर्थ: हे कृष्ण, वे ही हम राजा आज काल द्वारा — जो अथाह गति और दुर्निवार पराक्रम वाला आपका ही एक रूप है — अपनी सम्पदा से हिला दिए गए हैं। आपकी करुणा से हमारा दर्प नष्ट हो गया है, और अब हम आपके चरणों का स्मरण करते हैं। (स्कन्ध 10, अध्याय 73, श्लोक 13)



बन्धन टूट जाने पर राजा जरासन्ध से कोई द्वेष नहीं रखते; हाथ जोड़े वे श्रीकृष्ण से कहते हैं कि राज्य खोना उनका अनुग्रह था, और केवल यह माँगते हैं कि उनके चरणों की स्मृति कभी न छूटे।

तो इन राजाओं ने माँगा क्या? खोए हुए सिंहासन नहीं। उन्होंने कहा कि राज्य एक मृगतृष्णा है जिसे निरन्तर क्षीण होते, रोगों की जन्मभूमि इस शरीर से भोगना पड़ता है; और न ही उन्हें मृत्यु के बाद के उन कर्मफलों की लालसा थी जो केवल कानों को मीठे लगते हैं। उन्होंने एक ही वस्तु माँगी: ‘हमें वह उपाय बताइए जिससे आपके चरणकमलों की स्मृति कभी न टूटे — भले ही हमें इस संसार में जन्म-दर-जन्म भटकना पड़े।’

जैसे आरम्भ किया था, वैसे ही उन्होंने प्रणाम से समापन किया।

कृष्णाय वासुदेवाय हरये परमात्मने ।

प्रणतक्लेशनाशाय गोविन्दाय नमो नमः ॥ १६ ॥

kṛṣṇāya vāsudevāya haraye paramātmāne praṇata-kleśa-nāśāya govindāya namo namaḥ

अर्थ: वसुदेव-पुत्र कृष्ण को, परमात्मा हरि को, और अपने सामने झुकने वालों के क्लेश नष्ट करने वाले गोविन्द को बार-बार नमस्कार। (स्कन्ध 10, अध्याय 73, श्लोक 16)

प्रभु का कोमल उत्तर

जिनके बन्धन अभी-अभी टूटे थे, उन राजाओं की स्तुति सुनकर शरणागतवत्सल करुणामय प्रभु ने उन्हें मधुर और स्निग्ध वाणी में उत्तर दिया।

‘हे राजाओ,’ उन्होंने कहा, ‘आज से मुझमें — जो सबका आत्मा और सबका ईश्वर हूँ — तुम्हारी सुदृढ़ भक्ति अवश्य उत्पन्न होगी, ठीक वैसी जैसी तुमने चाही है।’ फिर उन्होंने उनके निश्चय की सराहना की।

दिष्ट्या व्यवसितं भूपा भवन्त ऋतभाषिणः ।
श्रियैश्वर्यमदोन्नाहं पश्य उन्मादकं नृणाम् ॥ १९ ॥

diṣṭyā vyavasitaṁ bhūpā bhavanta ṛta-bhāṣiṇaḥ śriyaiśvarya-madonnāhaṁ paśya unmādakaṁ nṛṇām

अर्थ: हे राजाओ, कितना सौभाग्य है कि तुमने ऐसा निश्चय किया, और तुमने सत्य ही कहा है। मैं स्वयं देखता हूँ कि धन और ऐश्वर्य का बढ़ता मद मनुष्यों को उन्मत्त कर देता है। (स्कन्ध 10, अध्याय 73, श्लोक 19)

उन्होंने पतित हुआ का स्मरण कराया: हैहय, नहुष, वेन, रावण, नरक और अन्य अनेक — देवता, दैत्य और नरेश सब — सम्पत्ति के मद से अपने पदों से गिर चुके थे। फिर उन्होंने नष्ट हुए बिना शासन करने का मार्ग बताया।

भवन्त एतद् विज्ञाय देहाद्युत्पाद्यमन्तवत् ।
मां यजन्तोऽध्वरैर्युक्ताः प्रजा धर्मेण रक्षयथ ॥ २१ ॥

bhavanta etad vijñāya dehādy utpādyam anta-vat māṁ yajanto 'dhvarair yuktāḥ prajā dharmeṇa rakṣayatha

अर्थ: यह जानकर कि देह और उससे जुड़ा सब कुछ उत्पन्न हुआ है और इसलिए नाशवान है, मन और इन्द्रियों को संयत रखते हुए यज्ञों द्वारा मेरी आराधना करो और धर्म के अनुसार अपनी प्रजा की रक्षा करो। (स्कन्ध 10, अध्याय 73, श्लोक 21)

उन्होंने कहा, सन्तान उत्पन्न कर अपनी वंश-परम्परा चलाओ, और जो कुछ आए — सुख और दुःख, जन्म और मृत्यु, लाभ और हानि — उसे समभाव से, जैसे-जैसे वह आए वैसे-वैसे स्वीकार करो, और इस प्रकार अपना चित्त मुझमें टिकाए हुए संसार में विचरण करो।

उदासीनाश्च देहादावात्मारामा धृतव्रताः ।
मय्यावेश्य मनः सम्यङ्मामन्ते ब्रह्म यास्यथ ॥ २३ ॥

udāsīnāś ca dehādāv ātmārāmā dhṛta-vratāḥ mayy āveśya manaḥ samyaṁ mām ante brahma yāsyatha

अर्थ: देह और उसके सम्बन्धियों के प्रति उदासीन, आत्मा में रमण करने वाले, व्रतों में दृढ़, और अपना मन पूर्णतः मुझमें लगाए हुए तुम अन्त में मुझ परब्रह्म को प्राप्त करोगे। (स्कन्ध 10, अध्याय 73, श्लोक 23)



मधुर वाणी में प्रभु राजाओं को सुदृढ़ भक्ति प्रदान करते हैं और सिखाते हैं कि संयमित इन्द्रियों से शासन करें, यज्ञ से उनकी आराधना करें, धर्म से प्रजा की रक्षा करें और सुख-दुःख को समभाव से झेलें।

स्नान, शृंगार और स्वदेश-विदाई

राजाओं को इस प्रकार उपदेश देकर भुवनेश्वर श्रीकृष्ण ने उन्हें स्नान कराने के लिए पुरुष और स्त्री सेवक नियुक्त किए। जरासन्ध-पुत्र सहदेव के द्वारा उन्होंने राजाओं का राजोचित वस्त्रों, आभूषणों, मालाओं और चन्दन से सत्कार करवाया। स्नान और शृंगार के बाद उन्हें उत्तम भोजन कराया गया और ताम्बूल तक हर राजसी सुख-सामग्री दी गई। मुकुन्द से इस प्रकार सम्मानित और क्लेश से छूटे हुए राजा अपने चमकते कुण्डलों के साथ वर्षा-ऋतु के अन्त में निखरे ग्रहों की भाँति दमक उठे।



स्नान, शृंगार और सहदेव के द्वारा सत्कार पाकर राजा वर्षा के बाद के ग्रहों-से दमकते हैं; श्रीकृष्ण उन्हें रत्नजड़ित रथों पर बैठाकर घर भेजते हैं, और हर राजा उन्हीं का ध्यान करता चलता है।

फिर प्रभु ने उन्हें मणि और स्वर्ण से जड़े, उत्तम घोड़ों वाले रथों पर बैठाया, मधुर और सत्य वचनों से प्रसन्न किया, और अपने-अपने देशों को विदा किया। महात्मा श्रीकृष्ण के द्वारा संकट से उबारे गए वे राजा केवल उन्हीं का और जगत्पति के कर्मों का ध्यान करते हुए चल पड़े। अपने राज्यों में पहुँचकर उन्होंने परम पुरुष के किए हुए उपकार अपने मन्त्रियों और प्रजा को सुनाए, और तत्पश्चात् उनकी दी हुई आज्ञाओं का तत्परता से पालन करते हुए जीवन बिताया।

इन्द्रप्रस्थ लौटना

भीमसेन के द्वारा जरासन्ध का वध करवाकर और सहदेव से यथोचित सम्मान पाकर केशव पृथा के दोनों पुत्रों के साथ चल पड़े। खाण्डवप्रस्थ पहुँचकर तीनों विजयी वीरों ने अपने शंख बजाए — ऐसा नाद जिसने मित्रों को हर्षित और शत्रुओं को व्याकुल कर दिया। उसे सुनकर इन्द्रप्रस्थवासी प्रसन्न हो उठे, क्योंकि वे तुरन्त समझ गए कि मगधराज शान्त हो गया है और युधिष्ठिर का मनोरथ लगभग पूरा हो चुका है।



इन्द्रप्रस्थ में तीनों विजयी युधिष्ठिर को प्रणाम कर अपना सारा वृत्तान्त सुनाते हैं; केशव की कृपा से अभिभूत धर्मराज आनन्द से रो पड़ते हैं और बोल नहीं पाते।

भीम, अर्जुन और जनार्दन ने राजा को प्रणाम किया और जो कुछ उन्होंने किया था, सब कह सुनाया। और धर्मराज युधिष्ठिर, केशव की अपने ऊपर हुई असाधारण कृपा सुनकर, एक शब्द भी न बोल सके।

निशम्य धर्मराजस्तत् केशवेनानुकम्पितम् ।

आनन्दाश्रुकलां मुञ्चन् प्रेम्णा नोवाच किञ्चन ॥ ३५ ॥

niśamya dharma-rājas tat keśavenānukampitam ānandāśru-kalāṁ muñcan premṇā novāca kiñcana

अर्थ: धर्मराज ने जब सुना कि केशव ने उन पर कैसी अनुकम्पा की है, तब उनके नेत्रों से आनन्द के अश्रु-बिन्दु झरने लगे और प्रेमवश वे कुछ भी न कह सके। (स्कन्ध 10, अध्याय 73, श्लोक 35)

इस अध्याय को प्रमुख शिक्षाएँ

1. हानि प्रभु का छिपा हुआ अनुग्रह हो सकती है। राजा अपने पतन को प्रभु का अनुग्रह कहते हैं और जरासन्ध से कोई द्वेष नहीं रखते। यही इस अध्याय का हृदय है: श्रीकृष्ण ने केवल एक कारागार का द्वार नहीं खोला। उन्होंने अभिमानी शासकों को सब कुछ से वंचित होने दिया ताकि अहंकार मरे और स्मरण जन्म ले — और जब वे उनके सामने खड़े हुए, तब उन्होंने पुरस्कार-स्वरूप उनके मुकुट नहीं लौटाए; उन्होंने उन्हें भक्ति और जीने के लिए धर्म दिया। यह पूरा प्रसंग प्रभु को काल-रूप में दिखाता है (श्लोक 13), जो हमें भ्रमित करने वाली वस्तु ठीक इसीलिए हटाते हैं कि हम उनकी ओर मुड़ें।
2. धन और सत्ता का मद एक उन्माद है। श्रीकृष्ण स्वयं राजाओं के निदान की पुष्टि करते हैं (श्लोक 19) और हैहय, नहुष, वेन, रावण और नरक को इससे नष्ट हुए शासकों के रूप में गिनाते हैं। समृद्धि एक परीक्षा है, कृपा का प्रमाण नहीं।
3. वस्तुएँ नहीं, स्मरण माँगो। राजा राज्य और स्वर्ग दोनों को ठुकराकर केवल यह माँगते हैं कि उनके चरणों की स्मृति उनसे कभी न छूटे, चाहे अनेक जन्म लेने पड़ें। सर्वोच्च प्रार्थना स्वयं प्रभु को ही माँगती है।
4. भक्ति कर्तव्य को मिटाती नहीं। श्रीकृष्ण राजाओं को वापस शासन करने भेजते हैं: यज्ञ से मेरी आराधना करो, धर्म से प्रजा की रक्षा करो, वंश चलाओ (श्लोक 21)। भक्त अपने उत्तरदायित्व प्रभु में मन लगाए हुए निभाता है।
5. समता भक्त का कवच है। सुख-दुःख, लाभ-हानि, जन्म-मृत्यु को जैसे वे आएँ, समभाव से झेलना है; जो देह से उदासीन और प्रभु में लीन होकर ऐसे जीता है, वह अन्त में ब्रह्म को पाता है (श्लोक 23)।
6. जहाँ शब्द चुक जाते हैं, वहाँ प्रेम उमड़ता है। युधिष्ठिर के मौन आँसू (श्लोक 35) दिखाते हैं कि प्रभु की कृपा का गहनतम उत्तर वाणी नहीं, पिघला हुआ प्रेम है।

एक भक्तिमय चिन्तन

इन राजाओं के बोलने के ढंग में कुछ ऐसा है जो चुपचाप अभिभूत कर देता है। जिन्होंने सिंहासन, सुख और अपनी गरिमा तक खो दी थी, जो वर्षों पहाड़ी कालकोठरी में पड़े रहे, वे आँखें मिचमिचाते प्रकाश में आते हैं — और सबसे पहले उस हानि के लिए प्रभु को धन्यवाद देते हैं। हम अपनी प्रार्थना का इतना बड़ा भाग यह माँगने में बिताते हैं कि जो था वह लौट आए। वे माँगते हैं कि उसे चाहने से बचाए जाएँ। बन्दीवास की कठोर पाठशाला में उन्होंने समझ लिया कि उन्हें जरासन्ध ने नहीं, उनके अपने नशे ने बाँध रखा था, और प्रभु की करुणा ने एक अत्याचारी की जंजीरों तक को कहीं पुरानी बेड़ियाँ ढीली करने में लगा दिया। और श्रीकृष्ण, जो उनमें से हर एक को सम्राट बना सकते थे, उन्हें वही एक वस्तु देते हैं जो उन्होंने माँगी: ऐसा हृदय जो उन्हें न भूले। शायद हमारी अपनी निराशाओं में भी वही करुणा छिपी है। जब कोई सहारा छिन जाए, तब हम पूछ सकते हैं कि क्या काल — जो उन्हीं का रूप है — चुपचाप हमारा मुख उनके चरणों की ओर नहीं मोड़ रहा।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज अपने जीवन की कोई एक हानि या उलटफेर याद कीजिए जो अब भी चुभती है। उसे मिटाने की माँग करने के बजाय राजाओं की प्रार्थना उधार लीजिए और केवल यह कहिए: ‘प्रभु, आपके चरणों की स्मृति मुझसे कभी न छूटे।’ फिर दिन का कोई एक साधारण कर्तव्य उठाइए और उसे, जैसा श्रीकृष्ण ने राजाओं से कहा, समभाव से और चित्त उनमें टिकाकर कीजिए। आरम्भ में धीरे-धीरे जपें: ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

उपसंहार

दशम स्कन्ध का यह तिहत्तरवाँ अध्याय मुक्ति के एक दृश्य को इस शिक्षा में बदल देता है कि सच्ची स्वतन्त्रता क्या है। जो बन्दी क्षतिपूर्ति माँग सकते थे, वे उस हाथ को आशीर्वाद देते हैं जिसने उन्हें झुकाया, और प्रभु के अखण्ड स्मरण के सिवा कुछ नहीं चाहते; श्रीकृष्ण वह भक्ति देते हैं और उन्हें भक्त बनकर शासन करने घर भेजते हैं, और युधिष्ठिर के शब्दहीन आँसुओं से अध्याय पूर्ण होता है। हम भी उन राजाओं से सीखें कि जो हमसे छीना जाए उसमें भी उनकी कृपा देखें, और काल के हर मोड़ पर उनके चरण थामे रहें।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

संदर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी), दशम स्कन्ध (उत्तरार्ध), त्रिसप्ततितम अध्याय, पृष्ठ 427–430।
- श्रृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़डम • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी एवं लिप्यन्तरण सहित दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश रूप में प्रस्तुत हैं। यह किसी एक प्रकाशक के सतत अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक के संबंध या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-10-chapter-73-krishna-blesses-the-liberated-kings-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज़डम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट